PATNA UNIVERSITY, PATNA

Dept. of Ancient Indian History & Archaeology
Dr. Dilip Kumar
Assistant Professor (Guest)
Paper – 104 (8), Polity, Sem. – IV

<u>Political organization & Institution referred in Vedic Literature – Sabha, Samiti & Vidath</u>

सभा :- वैदिक संहिताओं, ब्राहमण ग्रंथों एवं परवर्ती साहित्यिक तथा पुरातात्विक स्रोतों से विदित होता है की प्राचीन भारतीय राजतन्त्र में सभा एवं समिति नामक संस्थाओ का विशिष्ठ योगदान था । वैदिक साहित्य के विखरे विवरणों को संकलित करके समय - समय पर अनेक विद्वानों ने इन संस्थाओं की भूमिका को उजागर करने का प्रयत्न किया। इनमे सर्वप्रथम सभा के अस्तित्व, कार्य एवं तत्संबंधी अन्य तथ्यों को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :-

ऋग्वेद में सभा का उल्लेख आठ बार हुआ है। इन ऋचाओं में से एक में सभा के सदस्यों को 'सभेय विप्र' की संज्ञा दी गई है । एक अन्य स्थान पर उल्लेख है - तुम अपने घर को भद्र बनाओ, तुम्हारी वाणी भद्र हो और तुम चिरकाल तक सभा में रहो। ऋग्वेद की एक अन्य ऋचा में उपासको द्वारा गृह कार्य कुशल तथा सभा एवं यज्ञ में प्रमुखता रखने वाले पुत्रो की याचना की गई है । यहाँ सभेय (सभा में बैठने योग्य) शब्द का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में स्त्री को सभावती अर्थात् सभा में सम्मिलित होने योग्य कहा गया है।

ऋग्वेद के अनुसार धनी लोग अपने पूर्ण वैभव के साथ सभा में जाते थे :- " हे इन्द्र तेरा मित्र सुन्दर है तथा घोड़ो, रथों और गायों का धनी है । वह सदा उत्तम अन्न से संपन्न है; वह ऐश्वर्य के साथ सभा में जाता है ।

वैदिक आर्यो के पालतू एवं सर्वथा उपयोगी पशु गायों की श्रेष्ठता की सभा में चर्चा का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है :- "ओ गायों .... सभा में ऊँचे स्वर से तुम्हारी श्रेष्ठता की चर्चा की जाती है ।"

ऋग्वेद में एक उल्लेख यह है कि सभा में अक्ष (पासा) और जुआ खेला जाता था। प्रस्तुत अंशों पर दृष्टि डालने से कहा जा सकता है कि पूर्व वैदिक युग में सभा का सदस्य होना गौरवपूर्ण समझा जाता था। इसके पुरुष सदस्यों को 'सभेय' तथा स्त्री सदस्यों को 'सभावती' कहा जाता है । उस युग में स्त्रियों को भी सभा की सदस्यता का अधिकार था । संपन्न सदस्य सजधज कर सभा में जाते थे । देवतओं से सभा के योग्य संतान की कामना की जाती थी । न्याय करना सभा का एक महत्वपूर्ण कार्य था। इसके साथ ही साथ सभा में समय - समय पर मनोरंजन भी होता रहा होगा ।

वाजसनेय संहिता में एक सभा में किये गए पापकर्म एवं उनके प्रयश्चित का उल्लेख है :- “हम ग्राम, वन तथा सभा में किये गए अपने प्रत्येक पापकर्म का प्रयश्चित यज्ञ द्वारा करते है । टीकाकार महीधर की व्याख्या के आधार पर रमेश चन्द्र मजुमदार का मत है कि एक निश्चित रूप से वाद - विवाद के सन्दर्भ में महापुरुषों के विरुद्ध अनुचित भाषा के प्रयोग की ओर संकेत करती है और यह स्वतः सभा के कार्य के स्वरुप का एक चिन्ह है । दूसरी व्याख्या संभवतः सभा की न्यायिक क्षमता से सम्बद्ध है तथा उसका आशय विवादों के निर्णय में किये गए किसी प्रकार के पक्षपात से है ।”

वाजसनेय संहिता में सभाओं एवं सभापतियों (सभाओं के अध्यक्ष) को प्रणाम किया गया है । इसमें ‘सभाचार’ शब्द आया है । इसका अर्थ काणे ने सभासद अर्थात न्याय सम्बन्धी सभा का सदस्य किया है । इस प्रकार वाजसनेय संहिता के उल्लेखों में सभा सम्बन्धी तथ्यों से विदित होता है की सभा की सदस्यता समाज में आदर की दृष्टि से देखी जाती थी । यदि जाने अनजाने में किसी प्रकार की भूल हो जाती थी तो उस पर प्रयश्चित किया जाता था ।

अथर्ववेद में सभा एवं समिति को प्रजापति की दुहिताये कहा गया है। अथर्ववेद में सभा के लिए नरिष्ठा शब्द का प्रयोग मिलता है :- “ हे सभे, मैं तेरा नाम जानता हूँ। तेरा नरिष्ठा नाम ही ठीक है । जो भी तेरे सभासद है, वे मेरे समान वाणी का व्यवहार करें ।”

अथर्ववेद के अनेक मंत्रो में सभा की महत्ता तथा उनके सदस्यों के विचारों में समरूपता प्रतिष्ठित करने का वर्णन है । उदाहरणतया सभा मेरी रक्षा करें, उसके जो सभ्य सभासद है, वे मेरी रक्षा करें । एक स्थल पर सभा, समिति और सेना को एक ही मंत्र में उलिल्खीत किया गया है ।

तैतरीय ब्राह्मण में सभापाल शब्द का प्रयोग मिलता है । इसका तात्पर्य सभा के वरिष्ठ सदस्य से रहा होगा । सभा सम्बन्धी प्रस्तुत तथ्यों से युक्त निष्ठावान सदस्यों से संयुक्त होती थी । सभा के सदस्य तत्युगीन प्रसाशनिक, धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, साथ ही समय - समय पर मनोरंजन करते हुए वे अपने जीवन को रसमय रखते रहे होंगे । निश्चय ही सभा जैसी शक्ति संपन्न संस्था केन्द्रीय एवं स्थानीय राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन का आधार रही होगी ।

समिति :- ऋग्वेद में समिति के अल्प उल्लेख मिलते है, किन्तु उत्तर वैदिक साहित्य, विशेषकर अथर्ववेद में समिति सम्बन्धी अनेक उल्लेख है। इनके तार्किक विश्लेषण से एस संस्था की उपयोगिता असंदिग्ध रूप से विशिष्ट महत्वमयी प्रतीत होती है ।

ऋग्वेद के एक मंत्र में राजा की समिति में समिम्लित होने के लिए जाने का निर्देश मिलता है । राजा समिति को अपने अनुकूल रखने के लिए चेष्टावान रहता था । उदाहरणतया; ऋग्वेद की एक ऋचा में राजा समिति के सदस्यों (सामित्यों) से निम्न अंश कहता है :- “हे

सामित्यों ! मैं सब प्रयत्नों से विजयी एवं तेजस्वी होकर आया हूँ तुम्हारा विचार और तुम्हारी समिति मुझे स्वीकार है ।"

ऋग्वेद एवं वाजसनेय संहिता में उल्लेख है की विप्र एक भिषक (वैध) है, जिसमें औषधियां उसी प्रकार एक साथ आती है, जिस प्रकार राजा लोग समिति में जाते है । ऋग्वेद के अंतिम सूक्त के कुछ मन्त्रों में धार्मिक कृत्यों तथा प्रार्थनाओं द्वारा समिति को धार्मिक महत्व प्रदान करने का उल्लेख है । ऋग्वेद के बहुप्रचलित निम्न अंश में जिस पारस्परिक सहयोग तथा सामंजस्य की कामना की गयी है वह प्रत्येक युग में अपना वर्चस्व रखती है :- "एकत्र हो, मिलकर भाषण करो, तुम्हारे विचार समान हो । जिस प्रकार पुरातन देवता अपने निश्चित स्थानों पर बैठते है उसी प्रकार स्थान समान है, समिति समान है, चित समान है, व्रत समान है । मैं तुम्हारे समक्ष एक साधारण प्रयोजन रखता हूँ। तुम्हारा व्रत समान हो और तुम्हारा चित समान हो । सबके विचार समान हो, जिससे सब प्रसन्नतापूर्वक सहमत हो सके ।" इस प्रकार के उद्‌गारों से समिति में ऐक्य की महत्ता स्पष्ट होती है ।

अथर्ववेद के एक मंत्र में समिति में अग्निदेव का आवाहन किया गया है, जिससे वह बलि का अपना अंश ग्रहण करें। इसमें देवताओं के बीच देव समिति की कामना की गयी है । अथर्ववेद के अनेक मन्त्रों में राजा के लिए समिति का सहयोग प्राप्त करना अपेक्षित बताया गया है । राजा की ध्रुव रूप से सत्ता के लिए समिति का उसके अनुकूल होना आवश्यक माना जाता था। राजा के लिए समिति का वही महत्व था जो भैसें के लिए जंगल का, सोमरस के लिए घड़े का और पुरोहित के लिए यजमान का था । जो राजा स्वेच्छाचारी होने का यत्न करे समिति उसके वश में नहीं रह सकती थी । मजूमदार के अनुसार समिति वह आधार स्तम्भ थी जिसके बिना राजशक्ति के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती थी । अथर्ववेद के एक मंत्र के अनुसार रामशरण शर्मा का मत है कि महिलाएं भी इसमें सम्मिलित होती थी, किन्तु उनकी भूमिका के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है ।

अथर्ववेद के एक सूक्त में समिति में होने वाले सार्वजनिक वाद - विवाद की सांदर्भिक चर्चा में एक व्यक्ति द्वारा स्वयं विजयी होने के लिए किये गए प्रयासों को अत्यंत मनोहारी ढंग से प्रस्तुत किया गया है । मजूमदार ने इसका सम्यक विवरण प्रस्तुत किया है :- "एक व्यक्ति उत्तर - पूर्व दिशा से एक विशिष्ट पौधे की जड़ को चूसता हुआ समिति में प्रवेश करता था । बोलते समय वह उक्त जड़ को अपने मुह में रखता, उसका एक रक्षायंत्र या ताबीज बांधता और उसकी सात पत्तियों की एक माला पहनता हुआ यह वचन कहता था - हे औषधे, मेरे शत्रु वाद - विवाद में किसी प्रकार विजयी न हो सके । तू शात्रुओं से टक्कर लेकर उन्हें अभिभूत करती है । वाद - विवाद में मेरे प्रतिवादी के प्रतिवाद को नष्ट कर उन्हें नीरस कर दे । हे औषधे, सुपर्ण ने तुझे खोजा है, सुकर ने तुझे अपने थूथुन से खोदा है। प्रतिवाद को नष्ट कर ।" उपरलिखित अंश से कई महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाशित होते है । वैदिक युग में लोग सफलता प्राप्ति के लिए देव

प्रार्थना के साथ - साथ जादू - टोना (भुत विद्या जैसे तावीज धारण करना, पौधे की जड़ चुसना, पत्तियों की माला पहनना) में विश्वास रखते थे । वे समिति जैसी महत्वपूर्ण संस्था में वाद - विवाद में विजय की उपलब्धि के लिए सतत प्रयत्नशील रहते थे ।

ब्राहमण ग्रंथो में समिति से सम्बंधित वर्णनों का प्रायः आभाव है । उपनिषदों में छान्दोग्य तथा वृहदारण्यक का एक उल्लेख उदाहरानीय है :- श्वेतकेतु आरुणेय गौतम एक विद्वान युवक थे, जिन्होंने २४ वर्ष की आयु में सभी प्रकार के धार्मिक एवं दार्शनिक साहित्य का पूर्ण ज्ञान अर्जित कर लिया था । वे अपनी शिक्षा समाप्ति के उपरांत तुरंत एक समिति में गए जो पांञ्चालो की समिति अथवा परिषद् कहलाती थी । पांञ्चालो की जनसभा के अध्यक्ष राजन्य (क्षत्रिय) प्रवाहन जैवालि ने श्वेतकेतु से पाँच दार्शनिक प्रश्न किये । इनमें से किसी का भी उत्तर विवाद के इच्छुक अभिमानी श्वेतकेतु नहीं दे सके । इसपर प्रवाहण जैवलि ने कहा कि भला जो आदमी ये सब नहीं जानता, वह कैसे कह सकता है कि मैंने शिक्षा अर्जित की है ।" दो उपनिषदों में उल्लिखित प्रस्तुत अंश से एक निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उपनिषद काल में समिति विद्वानों की ज्ञान परीक्षा हेतु उपयुक्त संस्था रही होगी।

समिति से सम्बंधित वैदिक साहित्यों के उल्लेखों से जो तथ्य प्रकाश में आते है उनके आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि तत्कालीन राजतन्त्र पर बल दिया जाता था, देव प्रार्थना करके, राजा समिति को अपने वश में रखने के लिए प्रयत्नशील रहता था । समय - समय पर होने वाले उच्च कोटि के वाद - विवाद से नैतिक उत्कर्ष होता रहा होगा । इस संस्था में वाद - विवाद में भाग लेने वाले लोग देवार्चन के साथ - साथ तंत्र - मंत्र का भी सहारा लेते रहे होंगे ।

निष्कर्ष (सभा - समिति):- सभा और समिति के सम्बन्ध में अथर्ववेद में उल्लिखित प्रजापति की दो दुहिताओ के आधार पर प्रायः निश्चित है कि ये दोनों संस्थाएं अलग - अलग थी । दोनों संस्थाओं के सम्बन्ध में जिन महत्वपूर्ण विचारकों ने अपने जो तथ्य प्रस्तुत किये है उनमें कुछ का उल्लेख करना यहाँ समुचित प्रतीत होता है । लुडविग का मत है की सभा में पुरोहित, धनिक आदि उच्च वर्ग के लोग सम्मिलित होते थे और समिति के साधारण लोग रहते थे । जिमर का अनुमान है की सभा ग्राम संस्था थी और समिति पुरे जन की केंद्रीय परिषद् थी । यही मत अल्तेकर का भी है । हिलेब्रांड का मत है की सभा उस संस्था का नाम था जहा लोग एकत्रित होते थे और समिति एकत्रित समूह को कहते थे ।

वैदिक ऋचाओं से स्पस्ट होता है की सभा एवं समिति अपने युग की उन श्रेष्ठ संस्थाओं में थी जिनकी विशिष्ट सामाजिक प्रतिष्ठा थी इनमे भाग लेने वाले आर्य स्वस्थ मनोबल से युक्त तार्किक क्षमता वाले भद्र पुरुष होते थे । जिस प्रकार समारोह में वाद - विवाद के साथ अनुरंजन है तद्वत सोमपान एवं अक्ष क्रीडा सभा जैसी संस्था के अंग थे । निःसंदेह सभा और समिति वैदिक काल के राजतन्त्र में सम्यक भूमिका प्रस्तुत करती रही होगी।

विदथ :- वैदिक साहित्य में विदथ का उल्लेख विविध प्रसंगों में अनेक बार मिलता है । वस्तुतः ऋग्वेद में 122 बार तथा अथर्ववेद में 22 बार विदथ का उल्लेख है । वाजसनेयी संहिता में 10, ब्राह्मण ग्रंथों में 21 तथा तैतरीय आरण्यक में एक बार उल्लेख हुआ है। ये वर्णन साहित्य में वर्णित दो अन्य संस्थाओ, सभा एवं समिति की अपेक्षा अधिक है । ऋग्वेद में इसका सर्वाधिक 122 बार उल्लेख उस काल में इसकी महत्ता का परिचायक है ।

विदथ शब्द की उत्पति विद् धातु से हुई है जिसका अर्थ ज्ञान अथवा सत्य का अन्वेषण करना है । ऋग्वेद में आये अनेक प्रसंगों के आधार पर अल्तेकर प्रभृति विद्वानों ने विदथ को विद्वानों की सभा की संज्ञा दी है । उदाहरणतया ऋग्वेद के एक अंश के अनुसार विदथ में विद्वान ब्राह्मण एकत्र होते थे । यह क्रांतिकारियों की संस्था थी । विदथ का सदस्य होना गौरवपूर्ण समझा जाता था। ऋग्वेद में उल्लेख है कि विदथ की सदस्यता सोम की उपासना का प्रसाद है । विदथ की सदस्यता के लिए कतिपय विशिष्ट योग्यताओं से युक्त होना आवश्यक था । निर्भीकता वाणी की ओजस्विता एवं सारगर्भिता सदस्यता के लिए अपेक्षित थे । ऋग्वेद में उल्लेख है कि विदथ के सदस्य को यथार्त वक्ता होना चाहिए । इसी वेद में ही एक अन्य स्थल पर उपमा देते हुए कहा गया है कि अश्विनी कुमार यज्ञ में उसी प्रकार पधारने की कृपा करें जिस प्रकार देव स्तुति में दो ब्राह्मण विदथ में आते है।

वैदिक साहित्य के अनुशीलन से विदित होता है कि विदथ में वृद्धों एवं नारियों को विशिष्ट सम्मान प्राप्त था । अथर्ववेद में एक गृहस्वामी की मृत्यु से निवारण के लिए प्रार्थना का उल्लेख है, जिसमे वह जीवित रह कर विदथ में अपनी बात रख सके । वैदिक साहित्य में योषा एवं सूर्या नामक स्त्रियों के विदथ में भाग लेने का उल्लेख है ।

अग्नि, इन्द्र तथा मरुत देवता की उपासना विदथ में बहुशः की जाती थी । सायण ने अनेक वैदिक ऋचाओं के आलोक में विदथ के धार्मिक पक्ष को प्रबल देखते हुए इसे यज्ञ का पर्याय माना । वस्तुतः वैदिक ऋचाओं के विदथ सम्बन्धी विखरे हुए उद्धरणों को संकलित करने के उपरांत इसे केवल यज्ञ की संज्ञा देना उचित प्रतीत नहीं होता । ब्लूमफील्ड ने भी इसका खंडन किया है । ऋग्वेद की एक ऋचा में विदथ में अग्निदेव की प्रशंसा करते हुए सुविरों से पूर्ण भंडार के साथ धन खाद्य सामग्री तथा उत्कृष्ट संतानों के रूप में प्रचंड शक्ति अर्जित करने की कामना की गई है ।

ऋग्वेद की एक ऋचा में सोम का वर्णन हमारे विद्थों में बूंदों के रूप में किया गया है जिससे मालूम होता है कि लोग विदथ में सोमपान का आनंद लेते थे । विदथ को आर्यों का सोमपान एवं क्रीड़ा स्थल भी मन गया है । ऋग्वेद में उल्लेख है कि मरुद्गण अपने विदथों में क्रीड़ा करते थे । विदथ में अश्वों के गुणों की भी चर्चा होती थी ।

इस विवरण से ऐसा प्रतीत होता है कि इस संस्था में लोग सामूहिक रूप से एकत्र होकर न केवल देवोपासना अथवा उच्च आध्यात्मिक विषयों पर वाद - विवाद ही करते थे । वेदों में ऐसी

अनेक ऋचाएं है जिसमे समष्गित रूप से विदथ में वीरपुत्रों की कामना की गई है । ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं में आया है कि वीर पुत्रों से युक्त होकर हम विदथ में जोड़ से भाषण करें ।

पूर्व वैदिक युग में अनेक छोटे - छोटे राज्यों का अस्तित्व था । आर्यों एवं अनार्यों का संघर्ष प्रायः होता रहता था । संतान की उपलब्धि सामरिक दृष्टि से महत्व रखती थी । सामान्य रूप से बलशाली पुत्रों की कामना प्रायः प्रत्येक माता - पिता को रहती थी । इसी उदेश्य से विदथ में सुवीर पुत्रों की कामना की गई है।

विदथ में राजाओं के सम्मिलित होने के कतिपय उद्धरण मिलते है । एक ऋचा में स्वर्ग में बुद्धिमानों के विदथ में सम्मिलित होने की चर्चा मिलती है । ये दोनों उल्लेख वैदिक युग की इस संस्था का महत्व स्पष्ट करते है ।

निष्कर्ष:- निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वैदिक युगीन सभ्यताओं में विदथ की महत्वपूर्ण भूमिका थी । यह सामूहिक रूप से धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए की गई शुभाशंसा से समन्वित थी । प्रसासनिक कार्यों में यह संस्था राजा को कितना योगदान देती थी, कहना कठिन है । वैदिक ऋचाओं के आलोक में यह प्रायः निश्चित है कि विदथ में समाज के श्रेष्ठ लोग सम्मिलित होते थे । ऐसे लोगों की आवश्यकता राजा को सदैव रही है जो राज्य के नागरिक को अपनी गणों से सत्यपथ की ओर अग्रसर करे ।